❍ Year : 6 ❍ Issue : 22 ❍ October 2021 ❍ ISSN : 2456-0898

GLOBAL THOUGHT

ग्लोबल थॉट

(MULTI DISCIPLINE MULTI LANGUAGE RESEARCH JOURNAL)

(An International Peer Reviewed Refereed Quarterly Research Journal)

Special Note :

Anti National Thoughts are not acceptable.

स्वामी/मुद्रक/प्रकाशक रूपेश कुमार चौहान द्वारा 47, ए-3 ब्लॉक, गली नं. 5, धर्मपुरा एक्सटेंशन, (नजदीक संकट मोचन मंदिर), पी.एस. नजफगढ़, दिल्ली से प्रकाशित एवं डॉल्फिन प्रिंटोग्राफिक्स, 4 ई/7, पाबला बिल्डिंग, झंडेवालान् एक्सटेंशन, नई दिल्ली में मुद्रित।
सम्पादक-रूपेश कुमार चौहान
Ph. 09555222747, 9267944100, 9555666907 • Website : www.gtirj.com

शोध-पत्र

डॉ. संगीता रानी

भक्तिकाव्य : मानव मूल्यों का उत्कर्ष

एक अखिल भारतीय सांस्कृतिक, सामाजिक जनांदोलन के रूप में भक्तिकाव्य का महत्व अक्षुण्ण है। देश और काल की दृष्टि से ऐसा व्यापक सांस्कृतिक आंदोलन संसार में दूसरा नहीं है।[1] भक्ति काव्य सिर्फ कविता का आंदोलन नहीं था अपितु इसकी जड़ें गहरे तक विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक स्थितियों से जुड़ी थीं। इस आंदोलन का प्रभाव इतना गहरा और विस्तृत था कि इसने समकालीन समाज को दिशा देने के साथ ही अपने अतीत पर भी सार्थक टिप्पणी की और भविष्य के लिए मार्गदर्शन भी किया। इस काव्य की समग्र चेतना मानव मात्र की एकता, कथनी और करनी की एकता, दीन दुखियों के प्रति करुणा और चिंता, बाह्याचारों और प्रदर्शनप्रियता की खिलाफत, आडंबर और रूढ़िवादिता के विरोध, सत्ता के अहंकार पर चोट समेत मानव मात्र से प्रेम के संकल्पों से जुड़ी रही। भक्ति आंदोलन ऐसी सांस्कृतिक प्रेरणा भी रहा है, जिसने समय-समय पर जन अधिकारों के लिए उठ खड़े होने वाले आंदोलनों को ही नहीं अपितु सामूहिक कल्याण के चिंतन और दार्शनिक बहसों, विमर्शों को भी जनजुड़ाव की प्रेरणा और सामर्थ्य दी है।

किसी भी आलोचना और शोध कर्म की एक विशेषता यह भी होती है कि वह वर्तमान या अतीत के सामग्री में समकालीनता और सार्थकता की खोज करे। यह सार्थकता ही किसी भी दौर की रचना की असली ताकत होती है। इस दृष्टि से भक्तिकाव्य का मूल्यांकन एक सकारात्मक ऊर्जा का संचार करता है। इससे समकालीन समाज में ही नहीं, आधुनिक और लोकतान्त्रिक समाज में भी मानव प्रेम, समता और संघर्ष का जज्बे का संचार होता है। भक्तिकाव्य अपने बाहरी कलेवर में धर्म, दर्शन और आध्यात्म का काव्य प्रतीत होता है, तथापि मध्यकालीन समाज और परिस्थितियों के संदर्भ में इसकी वैचारिकता गहरे सामाजिक, मानवीय अर्थों और संभावनाओं को व्यक्त करती है। देश और दुनिया भर में मध्यकालीन दौर की रचनाओं में यह प्रवृत्ति देखने को मिलती है। यूरोप के मध्यकालीन सुधार आंदोलनों के बारे में चर्चा करते हुए एंगेल्स लिखते हैं कि 'मध्ययुग ने धर्म, दर्शन के साथ विचारधारा के अन्य सभी रूपों दर्शन, राजनीति, विधिशास्त्र को जोड़ दिया और इन्हें 'धर्म-दर्शन' की उपशाखाएं बना दिया। इस तरह उसने हर सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन को धार्मिक जामा पहनने के लिए विवश किया। आम जनता की भावनाओं को धर्म का चारा देकर और सब चीजों से अलग रखा गया इसलिए कोई भी प्रभावशाली आंदोलन आरंभ करने के लिए अपने हितों को धार्मिक जामें में पेश करना आवश्यक था।[2]

मध्यकालीन भारतीय समाज में भी धर्म पूरे समाज और व्यवस्था की धुरी की भूमिका में था। राजनीतिक, सामाजिक, दार्शनिक और दैनंदिन जीवन में भी धर्म की भूमिका बनी हुई थी। ऐसे धर्मभीरु समाज में किसी भी तरह के संदेश बिना धार्मिक आवरण के जनसामान्य तक पहुंचा पाना लगभग असंभव था। इसीलिए भक्त कवियों ने जनजागरण के लिए धर्म को एक सतर्क हथियार की तरह उपयोग किया। धर्म और आस्था की जनसामान्य तक पहुँच के सामर्थ्य का उपयोग उस समाज की रूढ़िवादिता, प्रपंच, उत्पीड़न और अव्यवहारिकता के विरुद्ध किया और भक्ति के माध्यम से ही एक समरस समाज की स्थापना का